**ओ३म्**

**‘धर्म विषयक सत्य व यथार्थ ज्ञान को ग्रहण करना व कराना कठिन कार्य है’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज का चतुर्थ नियम यह बनाया है कि **‘सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।’** इस नियम को सभी मनुष्य चाहे वह किसी भी धर्म के अनुयायी क्यों न हों, सत्य मानते व स्वीकार करते हैं परन्तु व्यवहार में वह ऐसा करते हुए अर्थात् असत्य को छोड़ते और सत्य को ग्रहण करते हुए दीखते नहीं है। महर्षि दयानन्द ने लगभग समस्त धार्मिक सत्य सिद्धान्तों व मान्यताओं से युक्त ग्रन्थ **‘सत्यार्थप्रकाश’** लिखा। आज भी यह ग्रन्थ देश-विदेश में प्रचारित व प्रसारित है। होना तो यह चाहिये था कि सभी पठित व विवेकी लोग इसको पढ़ते, असत्य को छोड़ते व सत्य को स्वीकार कर लेते। परन्तु अपवादों को छोड़कर ऐसा नहीं हुआ। अनुमान है कि सभी मतों व सम्प्रदायों के आचार्यों व उनके अनेक अनुयायियों ने इसे पढ़ा व जाना भी है परन्तु सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़़ने के सिद्धान्त को मानते हुए भी शायद ही किसी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखित सत्य मान्तयाओं व सिद्धान्तों को अपनाया हो। ऐसा नहीं कि सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ का कुछ प्रभाव नहीं हुआ, संसार के मुख्यतः धार्मिक लोगों ने तर्क व युक्ति को अपनाया और तर्क का स्थान कुछ सीमा तक कुतर्क ने ले लिया है। इसका कारण जानना विचारणीय एवं महत्वपूर्ण हैं। इसी पर आगे विचार करते हैं।

 सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ को लिखने के लेखक के आशय व लोग सत्य मान्यताओं को स्वीकार क्यों नहीं करते, इस पर महर्षि दयानन्द की ग्रन्थ में लिखी भूमिका पर दृष्टि डाल लेते हैं। वह कहते हैं कि **‘मेरा इस ग्रन्थ को बनाने का मुख्य प्रयोजन (मुख्यतः धर्म व मत-मतान्तर संबंधी) सत्य-सत्य अर्थ का प्रकाश करना है। अर्थात् जो सत्य है, उसको सत्य और जो मिथ्या है, उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना, सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है। वह सत्य नहीं कहाता जो सत्य के स्थान में असत्य और असत्य के स्थान में सत्य का प्रकाश किया जाये। किन्तु जो पदार्थ जैसा है, उसको वैसा ही कहना, लिखना और मानना सत्य कहाता है। जो मनुष्य पक्षपाती होता है, वह अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मत वाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है, इसलिये वह सत्य मत को प्राप्त नही हो सकता। इसीलिए विद्वान आप्तों का यही मुख्य काम है कि उपदेश वा लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरुप समर्पित कर दें, पश्चात वे स्वयं अपना हिताहित समझकर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहे।’** यहां महर्षि दयानन्द ने यह बताया है कि सभी मतों व धर्म के पक्षपाती लोग अपने असत्य को नहीं छोड़ते और दूसरे मत के सत्य को ग्रहण नहीं करते हैं, ऐसे लोग सत्य मत व धर्म को कभी प्राप्त नहीं हो सकते। वह अपनी हानि तो करते ही हैं, अपने उन अनुयायियों की जो उन पर आंखें बन्द कर विश्वास रखते हैं, उनकी भी हानि करते हैं। यह भी एक वा प्रमुख कारण समाज, देश व विश्व में अशान्ति का होता है।

 इसके आगे महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि ’**मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है। परन्तु, इस ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में ऐसी बात नहीं रक्खी है और न किसी का मन दुखाना या किसी की हानि पर तात्पर्य है। किन्तु, जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो, सत्यासत्य को मनुष्य लोग जानकर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें। क्योंकि, सत्योपदेश के विना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।’** यहां महर्षि दयानन्द ने मनुष्य के असत्य में झुक जाने का कारण उसकी स्वार्थ की प्रवृत्ति, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों को बताया है। यहां जो कारण बतायें गये हैं, वह निर्विवाद है। यही कारण है कि आज संसार में एक धर्म के स्थान पर अनेकानेक धर्म वा मत-मतान्तर आदि फैले हुए हैं।

 सभी मत-मतान्तरों के लोग अपने-अपने मत की सत्य व असत्य मान्यताओं पर विवेकरहित होकर विश्वास रखते व आचरण करते हैं, इस कारण वह न तो ईश्वर, जीवात्मा व प्रकृति के सत्य स्वरुप को जान पाते हैं और न हि ईश्वर प्रदत्त वेद ज्ञान के महत्व को समझ पाते हैं। ईश्वर के ज्ञान वेद से लाभ उठाना तो बहुत दूर की बात है। मनुष्य को अपने सभी काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य व असत्य को विचार करके करने चाहिये, इससे भी यह मताग्रही लोग वंचित रहते हैं जिससे वर्तमान व परजन्म में अनेक हानियां उठाते हैं। संसार का उपकार करना अर्थात् सभी मनुष्यों की शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना भी मनुष्य का धर्म है, इससे भी यह मताग्रही लोग दूर ही रहते हैं। इन मताग्रहियों का अज्ञानपूर्वक अपने मत को उत्तम मानने के कारण ऐसा देखने को नहीं मिलता कि कि इनका व्यवहार दूसरे मतों के लोगों के प्रति प्रीति का, धर्मानुसार व यथायोग्य है, इस कारण ये यथार्थ धर्म के आचरण से भी दूर ही रहते हैं। संसार का श्रेष्ठ सिद्धान्त है कि मनुष्यों को अविद्या का नाश व विद्या की वृद्धि करनी चाहिये। हम समझते हैं कि शायद् इस मान्यता का कोई भी विरोघी नहीं हो सकता व है। विज्ञान भी इसी सिद्धान्त पर कार्य करता है और उसने इस सिद्धान्त को अपनाकर ही असम्भव दीखने वाले कार्यों को सम्भव बना दिया है। यदि धर्म में भी अविद्या के नाश और विद्या की वृद्धि के इस सिद्धान्त का प्रवेश होता व अब भी हो जावें, तो सभी धर्मों वा मतों से असत्य, अज्ञान, अविद्या व अभद्र दूर हो सकते हैं। मताग्रहियों द्वारा इस सिद्धान्त का यथार्थ रूप में पालन न करने से वह अविद्या से ग्रसित रहते हैं व हैं। मत-मतान्तरों के व्यवहार के कारण अविद्या की भविष्य में भी दूर होने की कोई सम्भावना नहीं है। वेदों का एक सर्वमान्य सिद्धान्त यह है कि सभी मनुष्यों को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिये अपितु संसार के सभी मनुष्यों की उन्नति में ही अपनी उन्नति समझनी चाहिये। यह सभी मत-मतान्तर इस उद्देश्य की पूर्ति में भी बाधक सिद्ध हो रहे हैं जिसका कारण सत्य को व्यवहार व आचरण में न लाना वा स्वीकार न करना है। मत-मतान्तरों में निहित अज्ञान के कारण इनके सभी अनुयायी सामाजिक सर्वहतकारी नियम पालन करने में परतन्त्र रहने के सिद्धान्त के विपरीत भी आचरण करते हुए स्पष्ट दिखाई देते हैं जिससे सभी मनुष्यों की सर्वांगीण उन्नति में बाधा उपस्थित होती है।

 महर्षि दयानन्द ने अपने समय में ईश्वर पूजा और मूर्तिपूजा को एक दूसरे का पर्याय समझने का खण्डन करते हुए मूर्तिपूजा को अकरणीय व त्याज्य सिद्ध किया था। अवतारवाद, फलित ज्योतिष, मृतक श्राद्ध, जन्मना जाति और सामाजिक विषमता, बाल विवाह, बेमेल विवाह, सती प्रथा, अशिक्षा, अन्धविश्वास व अज्ञान का विरोध कर उन्हें वेद, तर्क व युक्तियों से खण्डित किया था जिसके प्रमाण आजतक किसी को नहीं मिले। इस पर भी इन सबका किसी न किसी रूप में व्यवहार हो रहा है जो कि देश व समाज के लिए हितकर नहीं है। अन्य मत के लोग भी हिन्दुओं का छल, प्रपंच, प्रलोभन, छद्म सेवा, बल प्रयोग व भय से धर्मान्तरण करने के नये-नये तरीके अपनाते रहते हैं। इतिहास में जो हुआ है वह सबके सामने है परन्तु लगता है कि इससे हमारे धर्म व संस्कृति के ठेकेदारों ने कोई शिक्षा ग्रहण नहीं की। मनुस्मृति में चेतावनी दी गई है कि धर्म उसी की रक्षा करता है जो धर्म की रक्षा करता है तथा जो मनुष्य व समाज धर्म का पालन करके उसकी रक्षा नहीं करता, धर्म भी उसकी रक्षा नहीं करता। अतीत में ऐसा हो चुका है कि हमारे पूर्वजों ने जिस पौराणिक मत का पालन किया, उसने उसकी रक्षा नहीं की। गुलामी व देशविभाजन सहित हमारे पूर्वजों, माताओं व बहिनों को अपमानित किया गया व होना पड़ा और अपना धर्म तक गंवाना पड़ा। ऐसा ही कुछ-कुछ वर्तमान व भविष्य में भी हो सकता है। अतः सभी मनुष्यों को वेदों का अध्ययन कर अपने अज्ञान को दूर कर अन्धविश्वासपूर्ण धार्मिक व सामाजिक मान्यताओं, विचारों व आस्थाओं को बदलना ही होगा। जो पदार्थ लचीला न हो वह टूट जाता है। हमें व संसार के सभी लोगों को लचीला होने का परिचय देना है। सत्य का आचरण ही मनुष्य धर्म है। इसी से मानवता की रक्षा होगी। आईये, सत्य के ग्रहण व असत्य के छोड़ने वा सत्य व असत्य को जानने के लिए सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ के अध्ययन का व्रत लें। अविद्या के नाश व विद्या की उन्नति द्वारा स्वयं की उन्नति के लिए यह अति आवश्यक है। यदि ऐसा कर लाभ नहीं उठायेंगे तो पछताना होगा।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**